



Neutral Citation No. - 2026:AHC-LKO:22340

उच्च न्यायालय इलाहाबाद, लखनऊ

दांडिक अपील संख्या.- 1354/2007

छोटे सिंह

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता

:- अजय के. सिंह

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता

:- शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या. - 12

माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर

1. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री अजय के. सिंह एवं प्रतिवादी/राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।
2. यह वर्तमान दाण्डिक अपील, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अंतर्गत, अपर सत्र न्यायाधीश/त्वरित न्यायालय संख्या-1, हरदोई द्वारा सत्र विचारण संख्या 162/2001, राज्य बनाम राम सिंह एवं अन्य जो वाद अपराध संख्या 30/2000, भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 504, 506, थाना सांडी, जिला हरदोई से उद्भूत है, में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

16.05.2007 के विरुद्ध दायर की गई है, जिसके माध्यम से अपीलार्थी को निम्नानुसार दोषसिद्ध एवं दंडादिष्ट किया गया है:-

(i) भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अंतर्गत: पाँच वर्ष का सश्रम कारावास एवं 1,000/-रुपये का अर्थदंड तथा व्यतिक्रम की दशा में छह माह का अतिरिक्त कारावास।

3. अभियोजन पक्ष के वृत्तांत के अनुसार, घटना 10.03.2000 को घटित हुई बताई जाती है, जब कृषि संपत्ति के विवाद को लेकर अपीलार्थी और सह-अभियुक्तों ने कथित तौर पर सूचनाकर्ता के बेटे और भतीजे पर हमला किया था। प्रथम सूचना रिपोर्ट के कथनानुसार, घटना लगभग 03:30 बजे घटित हुई, जब एक तीखी नोकझोंक के कारण, अपीलार्थी और सह-अभियुक्तों ने सूचनाकर्ता के बेटे (राजेश कुमार) और उसके भतीजे (बाबू) पर गोलियाँ चला दीं, जिसके कारण उनके सिर और शरीर के अन्य अंगों में गंभीर चोटें आईं। उपरोक्त घटना के अनुक्रम में, उसी दिन 06:30 बजे, वाद अपराध संख्या 30/2000, भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 504 और 506 के अंतर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और चिकित्सीय परीक्षण भी कराया गया, जिसमें चेहरे और शरीर के अन्य हिस्सों पर छरों की चोटें दर्शाई गईं। जहाँ चोट संख्या 1 की प्रकृति सामान्य पाई गई, वहीं घायल व्यक्तियों को चोट संख्या 2 के संबंध में निगरानी और एक्स-रे के लिए रखा गया, जो कि आँखों में थी और एक्स-रे रिपोर्ट के अनुसार इसे सामान्य प्रकृति का बताया गया।

4. उपरोक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट और चिकित्सीय आख्याओं को तत्पश्चात सात अभियोजन साक्षियों द्वारा सिद्ध किया गया तथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत साक्ष्य भी प्रस्तुत किए गए, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को उपरोक्तानुसार दंडित किया गया है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि दर्ज करने में त्रुटि की है, क्योंकि चिकित्सीय आख्या अभियोजन पक्ष के वृत्तांत का समर्थन नहीं करती थी और साक्षियों के बयानों में तात्त्विक विरोधाभास थे, जिन पर ध्यान नहीं दिया गया। यह भी तर्क दिया गया है कि विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को भी नजरअंदाज कर दिया कि घटना अचानक और गंभीर प्रकोपन के परिणामस्वरूप घटित हुई थी, जिसका लाभ प्रदान किया जाना चाहिए था।

6. विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय की ओर भी ध्यान आकर्षित करते हुए यह तर्क दिया है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के लाभ प्रदान करने की मांग उठाए जाने के बावजूद, इस पर संज्ञान तो लिया गया परंतु कोई चर्चा नहीं की गई। अतः, तर्क दिया जाता है कि चूँकि आक्षेपित निर्णय स्पष्ट रूप से यह इंगित करता है कि अपीलार्थियों का कोई पिछला आपराधिक इतिहास नहीं था, इसलिए वे परिवीक्षा के पूर्ण लाभ के पात्र थे।

7. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देते हैं कि अपीलार्थी को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया गया है और वह शुरुआत में ही यह प्रस्तुत करते हैं कि वह आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश को चुनौती नहीं दे रहे हैं, बल्कि अपने तर्क को केवल सजा के आदेश के संबंध में सीमित रख रहे हैं। यह भी तर्क दिया गया है कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के इस अभिवचन को अभिलेखित करने के बावजूद कि वह अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने का हकदार था, इस संबंध में निर्णय में कोई चर्चा नहीं की गई है।

8. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता की पूर्वोक्त तर्कों को ध्यान में रखते हुए, आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश से संबंधित सीमा तक यह अपील खारिज की जाती

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

है। अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश दिनांक 16.05.2007 की एतद्वारा पुष्टि की जाती है।

9. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उपर्युक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों तथा इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए कि अपीलार्थी पूर्व में किसी भी अपराध में दोषसिद्ध नहीं हुआ है, विचारण न्यायालय को परीक्षा अधिनियम, 1958 (आगे 'अधिनियम, 1958' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों का लाभ प्रदान करना चाहिए था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी को दण्डित करते समय न तो अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का और न ही दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के प्रावधानों का ही प्रयोग किया। आक्षेपित निर्णय में भी दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 अथवा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का लाभ न प्रदान किए जाने हेतु कोई विशेष कारण अंकित नहीं किया गया है।

संहिता की धारा 361 को लाभकारी प्रावधानों के साथ या उनके बिना लागू करना आवश्यक है, अर्थात् संहिता की धारा 360 या 1958 के अधिनियम के प्रावधान। यदि न्यायालय इनमें से किसी भी प्रावधान को लागू न करने का विकल्प चुनता है, तो उसे लाभकारी प्रावधान लागू न करने के लिए विशेष कारण देना आवश्यक है, बशर्ते अभियुक्त अपराधी अन्यथा संहिता की धारा 360 या 1958 के अधिनियम की धारा 3 या 4 के प्रावधानों के लिए पात्र हो।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देते हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी के पास लाभकारी विधि, अर्थात् 1958 के अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने का वैधानिक अधिकार है और न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत अनिवार्य रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 अथवा 1958 के अधिनियम की धारा 3 या 4 की प्रयोज्यता पर विचार करे। यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या 1958

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के अधिनियम के प्रावधानों को लागू नहीं किया गया था, तो न्यायालय को इसके लिए कारण अभिलेखित करने चाहिए थे। अतः, यह तर्क दिया जाता है कि इस सीमा तक, आक्षेपित निर्णय और आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के प्रावधानों का उल्लंघन होने के कारण गंभीर अवैधता से युक्त है, इसलिए, यह धारणीय नहीं है।

11. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने इस आपराधिक अपील का विरोध करते हुए यह तर्क दिया है कि आक्षेपित निर्णय के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों को सात अभियोजन साक्षियों द्वारा सिद्ध किया गया था, जिनमें सूचनाकर्ता, दो पीड़ित और परीक्षण करने वाले चिकित्सक शामिल हैं। यह तर्क दिया गया कि ऐसे पुष्ट साक्ष्यों के अनुसरण में ही दोषसिद्धि दर्ज की गई थी। हालांकि, यह स्वीकार किया गया है कि विचारण न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि यह अपीलार्थी का पहला अपराध था, परंतु संज्ञान में लिए जाने के बावजूद इस पर ध्यान नहीं दिया गया। वह स्वीकार करते हैं कि इस तथ्य के विरुद्ध कुछ भी प्रतिकूल नहीं है कि अपीलार्थी का कोई पिछला आपराधिक इतिहास नहीं है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360/361 के प्रावधानों के अंतर्गत, यह न्यायालय लाभ प्रदान करने पर विचार कर सकता है। हालांकि, यह स्वीकार किया गया है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के लाभ के संबंध में तर्क उठाए गए थे, परंतु उसका निराकरण नहीं किया गया है।

12. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के अवलोकन के उपरांत, चूंकि वर्तमान में केवल सदाचार परिवीक्षा के पहलू का ही निर्णय किया जाना है, अतः धारा 360 एवं 361 दण्ड प्रक्रिया संहिता उन आदेशों से संबंधित हैं जिनके अंतर्गत किसी अभियुक्त को सदाचार परिवीक्षा पर अथवा चेतावनी देकर मुक्त किया जा सकता है। इन धाराओं में यह उपबंधित है कि जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का कोई व्यक्ति ऐसे अपराध में दोषसिद्ध हो, जो केवल अर्थदण्ड से अथवा सात वर्ष या उससे कम अवधि के कारावास से दण्डनीय हो, अथवा जहाँ 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति ऐसे अपराध में दोषसिद्ध हो, जो मृत्युदण्ड या आजीवन कारावास से दण्डनीय न हो, तथा अपराधी के विरुद्ध किसी पूर्व दोषसिद्धि का प्रमाण न हो, वहाँ दोषसिद्धि अभिलिखित करने वाला न्यायालय अपराधी की आयु, चरित्र, पूर्ववृत्त तथा अपराध किए जाने की परिस्थितियों सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करने हेतु बाध्य है और उसे किसी दण्ड से दण्डित करने के स्थान पर सदाचार परीक्षा पर मुक्त किया जाना चाहिए। इसके लिए न्यायालय उसे इस शर्त पर बंधपत्र, प्रतिभूतियों सहित अथवा बिना प्रतिभूति के, निष्पादित करने का निर्देश दे सकता है कि वह निर्दिष्ट अवधि के दौरान शांति बनाए रखेगा तथा अच्छा आचरण करेगा और आवश्यकता पड़ने पर उपस्थित होकर दण्ड ग्रहण करेगा। ऐसी शक्तियों के प्रयोग का प्रावधान अपीलीय न्यायालय, उच्च न्यायालय अथवा सत्र न्यायालय के लिए भी किया गया है।

13. उक्त संहिता की धारा 361 कुछ मामलों में दर्ज किए जाने वाले विशेष कारणों की ओर संकेत करती है, जिसका आशय यह है कि यदि कोई अभियुक्त धारा 360 के अंतर्गत या अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बाल अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किशोर अपराधी या किशोर अपराधियों के प्रशिक्षण या पुनर्वास से संबंधित किसी अन्य विधि के अंतर्गत लाभ का पात्र है, किन्तु उसे ऐसा लाभ प्रदान नहीं किया गया है, तो न्यायालय अपने निर्णय में ऐसा न करने के लिए विशेष कारण अभिलेखित करेगा।

14. इस विषय पर केंद्रीय विधि, अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 है, जिसकी विशेष रूप से धारा 3 और 4 कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात रिहा करने की न्यायालय की शक्ति और कतिपय अपराधियों को सदाचार की परीक्षा पर रिहा करने की शक्ति को इंगित करती हैं।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

15. उत्तर प्रदेश राज्य में लागू राज्य विधान 'उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 है, जिसमें भी धारा 3 और 4 क्रमशः कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात और सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा करने की न्यायालय की शक्तियों से संबंधित हैं।

16. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 की प्रयोज्यता के पहलू पर इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा *उत्तर प्रदेश बनाम मिसरी लाल एवं अन्य*, 1982 CrLJ 1420 में प्रकाशित, में विचार किया गया था। निर्णय का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

"26. ...उत्तर प्रदेश में धारा 360 के आवेदन को वर्ष 1975 के एक अध्यादेश द्वारा वापस ले लिया गया था। उस अध्यादेश को निरस्त कर दिया गया और उसके स्थान पर दंड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, संख्या 16/1976 लागू किया गया। इस अधिनियम को 30-4-1975 को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई और इसे 1-5-1976 के उत्तर प्रदेश असाधारण राजपत्र में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम की धारा 12 ने उक्त अध्यादेश को निरस्त कर दिया और यह निर्धारित किया कि ऐसे निरसन के बावजूद, अध्यादेश के तहत किया गया कोई भी कार्य या की गई कोई भी कार्रवाई इस अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत की गई मानी जाएगी, मानो यह अधिनियम 28 नवंबर, 1975 को लागू हुआ हो। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने इस मामले का निर्णय 2-2-1976 को किया था। संशोधन अधिनियम संख्या 16, /1976 की धारा 10 ने संहिता की धारा 484 में संशोधन किया और खंड (घ) के पश्चात निम्नवत खंड (ङ) जोड़ा:-

“(ङ)...संयुक्त प्रांत प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938..... उत्तर प्रदेश राज्य में लागू रहेगा....और तदनुसार इस संहिता की धारा 360

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के प्रावधान उस राज्य में लागू नहीं होंगे एवं धारा 361 के प्रावधान, उसमें उल्लिखित केंद्रीय अधिनियमों के संदर्भ के स्थान पर उस राज्य में लागू संबंधित अधिनियम के संदर्भों के साथ लागू होंगे।"

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 यह निर्धारित करती है कि जहाँ किसी भी मामले में न्यायालय किसी अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध धारा 360 के अंतर्गत या अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बाल अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किसी किशोर अपराधी या किशोर अपराधियों के उपचार, प्रशिक्षण या पुनर्वास के लिए उस समय लागू किसी अन्य विधि के अंतर्गत कार्रवाई कर सकता था, किन्तु उसने ऐसा नहीं किया है, तो वह अपने निर्णय में ऐसा न करने के विशेष कारणों को अभिलेखित करेगा।

उपरोक्त वर्णित धारा 484 के खंड (ड) के साथ पठित इस प्रावधान से यह निष्कर्ष निकलता है कि न्यायालय के लिए उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1938 के प्रावधानों का लाभ न देने के लिए विशेष कारण अभिलेखित किया जाना आवश्यक है।"

17. अतः उन भौगोलिक क्षेत्रों में जहाँ उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीवीक्षा अधिनियम' को लागू किया गया है, वहाँ उसी के प्रावधानों का पालन किया जाएगा न कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 का पालन किया जाएगा। इस प्रकार, किसी विशेष क्षेत्र में परीवीक्षा अधिनियम का प्रवर्तन, उस क्षेत्र में संहिता की धारा 360 के प्रावधानों की प्रयोज्यता को अपवर्जित कर देता है। हालांकि, न्यायालय का यह अनिवार्य कर्तव्य होगा कि वह इस बात पर विचार करे कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत दिए गए प्रावधानों के अनुसार अपराधी परीवीक्षा अधिनियम का लाभ क्यों न दिया जाए।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

18. जहाँ तक अभियुक्त-अपीलार्थी को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ प्रदान करने की वांछनीयता का प्रश्न है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने *सीताराम पासवान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य*, AIR 2005 SC 3534 में प्रकाशित किए गए मामले में, निम्नानुसार निर्धारित किया है:-

"उस शक्ति का प्रयोग करने के लिए जो कि विवेकाधीन है, न्यायालय को मामले की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र पर विचार करना होता है। अपराध की प्रकृति पर विचार करते समय, न्यायालय को अपराध की गंभीरता और पीड़ित पर उस अपराध के प्रभाव का एक यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अभियुक्त को उपलब्ध लाभ उक्त प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन है और "सकता है" शब्द स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि यह न्यायालय का विवेक है कि वह अपराध की प्रकृति, अपराधी के चरित्र और मामले की समग्र परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 3 या 4 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करके अपराधी को रिहा करे या नहीं। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत शक्तियाँ न्यायालय में तब निहित होती हैं जब कोई व्यक्ति किए गए अपराध का दोषी पाया जाता है, जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय न हो। इस शक्ति का प्रयोग न्यायालयों द्वारा व्यक्ति को दोषी पाते समय किया जा सकता है और यदि न्यायालय को लगता है कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र शामिल हैं, को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त को लाभ दिया जाना चाहिए, तो इस शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा अपील या

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पुनरीक्षण चरण में और इस न्यायालय द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत अपील की सुनवाई के दौरान भी किया जा सकता है।"

19. **मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य**, AIR 2017 SC 660 में प्रकाशित, में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अपनी राय व्यक्त की है:-

"20. ...रतन लाल बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 444 में, न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से बोलते हुए इस प्रकार विचार व्यक्त किए:-

"यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार के आधुनिक उदारवादी रुझान की प्रगति में एक मील का पत्थर है। यह इस सिद्धांत की मान्यता का परिणाम है कि आपराधिक विधि का उद्देश्य व्यक्तिगत अपराधी को दंडित करने के बजाय उसमें सुधार करना अधिक है। मोटे तौर पर कहा जाए तो, यह अधिनियम 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों, तथा मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध करने के दोषी अपराधियों और कम गंभीर अपराध के दोषी अपराधियों के बीच अंतर करता है। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में, अधिनियम के उचित प्रावधानों में निर्धारित शर्तों के अधीन, उन्हें भर्त्सना के पश्चात या सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा करने के लिए न्यायालय को पूर्ण विवेक दिया गया है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह निर्देश दिया गया है कि वह उन्हें कारावास की सजा तब तक न सुनाए जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधियों का चरित्र

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

शामिल है, को देखते हुए उनके साथ अधिनियम की धारा 3 और 4 के अंतर्गत व्यवहार करना अपेक्षित नहीं है।"

20. वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रावधानों और निर्णयों की प्रयोज्यता पर विचार करने से यह स्पष्ट है कि घटना का घटित होना वर्ष 2000 में होना बताया गया है, जिसमें अधिकतम पांच वर्ष के कारावास और जुर्माने की सजा सुनाई गई है। तब से अब तक 25 वर्ष से अधिक का समय बीत चुका है।

21. जहाँ तक दोषसिद्धि के भाग का संबंध है, इस न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता, विकृति अथवा त्रुटि परिलक्षित नहीं होती है, किन्तु उपर्युक्त की गई चर्चा को दृष्टिगत रखते हुए अभियुक्त-अपीलार्थी को प्रदत्त दण्ड में संशोधन किया जाना आवश्यक है।

22. निम्नवत संशोधनों के साथ यह अपील **आंशिक रूप से स्वीकृत** की जाती है:-

19.1. अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बरकरार रखा जाता है। अपीलार्थी-अभियुक्त की सजा को इस सीमा तक संशोधित किया जाता है कि उसे उत्तर प्रदेश अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ प्रदान किया जाता है और उसे इस शर्त पर परिवीक्षा पर रिहा किया जाता है कि वह आज से एक वर्ष की अवधि तक शांति बनाए रखेगा और सदाचारी बना रहेगा। वह अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष अपने व्यक्तिगत बंध-पत्र के साथ 30,000/- रुपये के दो प्रतिभू दाखिल करेगा और इस आशय का एक वचन-पत्र भी देगा कि वह आज से एक वर्ष की अवधि के दौरान शांति और अच्छा व्यवहार बनाए रखेगा। उपरोक्त शर्तों में से किसी भी शर्त के उल्लंघन की स्थिति में, अपीलार्थी को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा सुनाई गई मूल सजा भुगतनी होगी।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपरोक्त बंध-पत्र अपीलार्थी द्वारा आज से एक महीने के भीतर संबंधित न्यायालय को सूचित करते हुए जिला परीवीक्षा अधिकारी, हरदोई के समक्ष दाखिल किए जाएंगे।

23. आदेश की प्रमाणित प्रति आवश्यक अनुपालन हेतु संबंधित न्यायालय तथा जिला परीवीक्षा अधिकारी, हरदोई को भी तत्काल प्रेषित की जाए।

(न्यायमूर्ति मनीष माथुर)

मार्च 31, 2026

सुबोध/-

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।